चित्रा मुद्गल के उपन्यास 'एक जमीन अपनी' का संवेदनीय महत्व

डॉ. अभिलाषा शुक्ला

सहायक प्राध्यापक

संत एलायसियस,

महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

शोध–प्रपत्र

चित्रा मुद्गल जी आधुनिक युग की परिवर्तित नवचेतना की प्रतिनिधि रचनाकार हैं। विषयवस्तु की दृष्टि से उनकी सृजन–धर्मिता विस्तृत और विविधता से संयुक्त है। समकालीन जीवन के सभी सम–विषय पक्ष उनकी रचनाओं में समाविष्ट हैं। आस्था, आक्रोश, आत्मालोचन, प्रेमानुभूति, सामाजिक चिन्तन, विसंगतिबोध, सन्त्रास, तार्किक मानवीय दृष्टि, नागर बोध, आंचलिकता, शोक–सन्ताप, हर्ष–विषाद, जैसे सभी विषयों में उन्होंने श्रेष्ठ रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। बाल–संवेदनाओं, युवा आक्रोश, वृद्ध समस्याओं, स्त्री–पुरुष मानसिकता से लेकर सामाजिक, आर्थिक परिदृश्य, फिल्मी ग्लैमर, विज्ञापन जगत और मजदूर यूनियन संघों तक की वस्तु स्थियितों को उन्होंने अपने साहित्य में बखूबी समेकित किया है।

पाश्चात्य विचारक टी.एस. इलियट ने आलोचना के मानदंडों का निर्धारण करते हुए बहुत ही सारगर्भित बात कही है कि जो आलोचक युगीन सौन्दर्य चेतना का उसकी समस्त विशेषताओं के साथ साक्षात्कार करते हुए उच्चतम आदर्शों से उसका अभिषेक करते हैं वहीं क्रांतिदर्शी होते हैं। **''आज हिन्दी का साहित्य प्रतिपल परिवर्तित मानदण्ड एवं निश्चित धरातल के अभाव में बड़ी विषम परिस्थितियों में आबद्ध हो गया। आचार्य द्विवेदी ने जिज्ञासु विचारकों के लिये नवीन मार्ग का अनुसंधान किया है। प्रत्येक विचारों, प्रत्येक मान्यताओं**

को किसी–न–किसी अंश में लेकर अपने साहित्य में उन्होंने अद्‌भुत समन्वय उपस्थित किया है।''[1]

उनकी लेखनी बाह्य परिवेश के मूल्यवान बिन्दुओं एवम् समसामायिक जीवन के मूलभूत प्रश्नों से स्वयं को सम्पृक्त करके शाश्वत जीवन मूल्यों की पार्श्वभूमि में नवीन चेतनाबोध और मूलभूत सांस्कृतिक तत्वों के अनुपम शब्द चित्र निर्मित करती चलती है। उनकी गहरी सत्यान्वेषणि अन्तर्दृष्टि भौतिक जीवन के कष्टों और परेशानियों को अनावृत कर मानवीय संवेदनाओं को चित्रित करती है। चित्रा मुद्‌गल ने अपने विभिन्न उपन्यासों में कथा विन्यास एवं भावसंवेदना को व्यक्त किया है, जिसमें स्त्री एवं पुरुषों ने अपनी भाव संवेदनाओं को अलग–अलग भाव से व्यक्त किया है। एक जमीन अपनी उपन्यास में जीवन की बहुत सी चुनौतियाँ और संघर्षों को चेतना, गरीबी, भुखमरी, दरिद्रता एवं बेरोजगारी को व्यक्त करके समाज के समक्ष बहुत सी चुनौतियों को पटाक्षेप किया है।

सुधांशु स्त्री को बिल्कुल निम्न स्तर का मानता है, 'तुम मामूली औरत, क्या है तुममें? सिवा तराशी हुई देह के? और मैं सिर्फ तराशे शरीर के साथ नहीं रह सकता, पुरुष को इससे आगे भी कुछ चाहिए होता है। महज शरीर पाने के लिए उसे घर में औरत पालने की जरूरत नहीं होती...। अंकिता सचमुच घर को जीना चाहती है, लेकिन उसका पति उसकी इच्छाओं एवं स्वातंत्रय को मानने वाला नहीं था। अंकिता को पहली बार एहसास हुआ कि कुछ लोग दूर से ही अच्छे लगते हैं, अच्छे होते हैं। हरियाली के बीच गुंथे पोखर से, जिसका सड़ा हुआ पानी गले से नीचे उतरता है तो विष बनकर शिराओं को सुन्न कर देता है। उनके बच्चे का मरना दोनों के लिए अच्छा लगता है। कारण दोनों बच्चे के मध्य संबंध को बनाए रखना नहीं चाहते। वे सदा के लिए दूर–दूर अलग होकर रहना चाहते हैं।

अंकिता के शब्दों से उनके संबंध की शिथिलता एवं व्यर्थता का अहसास होता है, 'मेरे लिए भी उसका मरना मेरी जिंदगी से तुम्हारा निष्कासन है, वरना उसकी शक्ल में जिंदगी–भर मुझे तुमको ढोना पड़ता, क्योंकि वह हमारा बच्चा नहीं था, तुम्हारी कामुकता का परिणाम था, मुझे तुमसे घृणा है घृणा, तुम्हारी ऐयाशियों

और ज्यादतियों को....सती–साध्वी बनी मॉग में सजाए इस मुगालते में मत रहना कि मैं स्त्रीत्व की पूर्णता का भ्रम जीती रहूँगी। लो इसी वक्त यह रिश्ता खत्म'। सुधांशु ने अंकिता की कोमल भावनाओं को तहस–नहस कर दिया। यह अंकिता कभी भी भूल नहीं सकती उसके साथ और एक जिंदगी वह सोच भी नहीं सकती। सदा के लिए वे अलग हो जाते हैं। सुधांशु और अंकिता की भाव संवेदना अलग–अलग हैं, तथा दोनों ही मानवीय दृष्टिकोण से गुजर रहे हैं।

अंकिता और सुधांशु का परिचय उनके मित्र हरीन्द्र के माध्यम से हुआ था। इसलिए दूर–दूर होने के बाद भी सुधांशु को अंकिता संबंधी समाचार हरीन्द्र से मिलता था। अंकिता नौकरी की तलाश में भटक रही थीं। वह एक अध्यापिका बनना चाहती थीं, लेकिन उसका रास्ता विज्ञापन जगत बन गया। वहॉ कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा, लेकिन वह थके बिना आगे बढ़ती हैं। पत्र–पत्रिकाओं में कई लेख एवं विशेष स्तंभ लिखकर वह जीवन चलाने के साथ लिखने एवं सोचने को अपनी प्रतिभा भी प्रकट करती रही। उसी बीच में उसकी मॉ का देहांत हो जाता है।

यह वियोग उसके लिए इतना दुःखद था कि झेलने से परे था। सुधांशु से अलग होने के बाद उसके लिए अपना घर ही एकमात्र सहारा था। घर के प्रति उसके मन में बड़ा मोह था। वह सुधांशु के साथ घर बनाना चाहती थी। एक स्त्री के मन को पूर्णतः समझकर उपन्यासकार ने घर संबंधी स्त्रियों की धारणा एवं कल्पना पर गहराई से विचार मंथन किया है। मॉ के चले जाने के तुरंत बाद घर एवं सॅपत्ति के बंटवारे के लिए भाई–भौजाइयों के बीच में तर्क–वितर्क एवं चर्चाएँ होने लगीं।

''उसका मन यह कतई स्वीकार नहीं पाता कि वह घर उसका घर नहीं है। अम्मा के वियोग से अतृप्त हृदय और घर के कलहपूर्ण वातावरण के बीच में सुधांशु उसे मिलने आया। सुधांशु घरवालों के लिए पुराना जीजा है, लेकिन अंकिता को लगा कि सदैव के लिए संबंध समाप्त हो जाने के बावजूद क्यों भाई–बहनों के लिए यह जीजा संबोधन।''[2] अंकिता ने

इस रिश्ते के संबंध में बहुत सोचा था। वैचारिक मतभेद उनके दांपत्य की ऊष्मा को चाटता घुन नहीं था, घुन था, उसका जबरदस्त आरोपण। सुधांशु के भीतर के अहंकारी पुरुष की निरंकुश प्रवृत्ति अंकिता की समस्त भावनाओं से खिलवाड़ करती थी। उससे वह आनंद लेता था। इसलिए वह कभी भी सुधांशु से समझौता नहीं कर सकती। वह सोचती है, 'कभी सोचा होगा सुधांशु ने देह और मन का वनवास, उसकी भावनाओं के विरूद्ध उसे विरक्त करना, तप–सा असाध्य उसे साधना सहज है। आखिर वह भी मानवीय है, उसके भीतर की स्त्री में किसी रोमिल छाती की सुदृढ़ सघन छांव की ललक नहीं सिर उठाती! मॉग था मात्र भीतर की उस स्त्री का सम्मान अस्तित्व का स्वीकार। और इस्तेमाल से विद्रोह।' वह बुनियादी स्तर पर एक स्त्री ही है, लेकिन सुधांशु ने उसके अस्तित्व का तिरस्कार किया, उसका इस्तेमाल किया।

पति के ऐसे शोषण के साथ पत्नी को कभी भी समझौता करने की जरूरत नहीं है। ऐसी समझौतापरस्त जिंदगी का कोई मतलब नहीं है। यहॉ उपन्यासकार स्त्री की अस्मिता को बनाए रखने में ऐसे रिश्ते को काटने की जरूरत आ जाए तो काटने के पक्षधर हैं। स्त्री होने के नाते स्त्री सहज मोह उसके मन को आलोकित करेगा, लेकिन पत्नी का अपनापन खोकर जीने का कोई मतलब नहीं है। पति से अलग होने पर मायके वाले स्त्री का साथ दें तो वह उसके लिए आत्मबल बढ़ जाता है। अंकिता के संबंध में मॉ के देहांत तक यह सही था। मॉ और घरवाले उसका आत्मबल बनकर सभी विपत्तियों एवं संघर्षों से उसे बचाते थे, लेकिन घर के बंटवारे से उसे लगने लगा कि उसका सारा धैर्य नष्ट हो रहा है। उसने घरवालों के सामने बिनती की कि उसे घर से अलग न करें। इस स्थिति में भी वह सुधांशु को साथ लेना नहीं चाहती। बाद में भैया ने निरंतर पत्र के द्वारा सुधांशु से अंकिता को जोड़ना चाहा। सुधांशु ने भैया को समझाया कि अपने में खोए हुए मनुष्य की तलाश करना वह चाहता है। वह पश्चाताप करता है। अलगाव के दीर्घ अंतराल ने उसे अपने अंतर्मन में झॉकने समझने के लिए बाध्य किया है। वह अंकिता से क्षमा मांगता है और वह उसे विस्मृत भी नहीं कर सकता।

अब वह बी.बी.सी. में नौकरी पाकर लंदन जा रहा है। उसके पहले अंकिता से वह मिलना चाहता है। भैया के पत्रों से उसे कई बातें स्पष्ट हो गईं। जो आर्थिक सुरक्षा उसने अर्जित की है, शायद उनकी दृष्टि में पूर्णतः सुरक्षा नहीं है। उसके मायने में सही सुरक्षा तभी होगी, जब वह एक अदद पुरुष की निगरानी में हो। **''सामान्य सोच यही है। पूर्ण सुरक्षा की यही व्याख्या है। स्त्री आत्मनिर्भर होती तो आज सुरक्षा की परिभाषा उसके हिस्से में कुछ और ही होती, लेकिन मन की बात दूसरी है। वह न आत्मनिर्भर होकर लहलहाता है न पराश्रयी होकर उजड़ता है, उसे संवेदनाओं का संवेग चाहिए।''**[3] उपन्यासकार के अनुसार, 'संग! सोच! जीना! समझना! परस्पर सम्मान! न मिले प्रतिदान तो क्या जीवन का यह अलग पक्ष है। उसकी अपनी दुनिया।

इस अंतर्निहित दुनिया के आबाद हुए बिना भी जिया जा सकता है, जी नहीं रही वह? दुष्कर है। इसलिए कि इस छोर से उस छोर तक संतुलन सूत्र अनुपस्थित होता है, लेकिन असंतुलन व्यवधान नहीं बोता! इस जटिलता से स्त्री को गुजरना ही है, असंतुलन के शून्य को सिर्फ इसलिए भर लेना उसके लिए जरूरी नहीं कि बिना पुरुष के संपूर्ण सुरक्षा–भाव पूरा नहीं होता है। अंकिता विज्ञापन जगत में बहुत ऊँचे पद पर पहुँच गई। वहाँ की चकाचौंध की व्यर्थता वह अच्छी तरह पहचानती हैं। मैथ्यू जैसा उद्योगपति स्त्री शरीर को परोसकर अपने को बढ़ाता है। उन जैसे कपटी लोगों की भी पोल खोलकर एक धीर सशक्त नारी स्वरूप बन गई है अंकिता। फिर भी उसकी जिंदगी में एक शून्यता है। घर बसाने का मोह है, लेकिन सुधांशु जैसे पुरुष से वह शून्यता भरना अंकिता चाहती नहीं है।

हरीन्द्र ने लंदन जाने के पहले सुधांशु को अंकिता से मिलाने के लिए दोनों को घर बुलाया। तब अंकिता के मन में पिछली मुलाकात की याद आईं। अंकिता की अम्मा के मृत्योपरांत की भेंट एक विशेष मनःस्थिति में हुई। वह अप्रत्याशित मुलाकात थी। तब उसे सुधांशु व्यक्ति न होकर सिर्फ वह काला पन्ना ही लगा था, जिस पर कोई भी अन्य रंग आधार बनकर नही चढ़ सकता था। उस दिन सुधांशु का रंग पति का था। अंकिता आजीवन इस रंग को चढ़ाकर जीना चाहती नहीं है।

वह उसे केवल व्यकित के रूप में देखना पसंद करती है। हरीन्द्र के घर में अंकिता सुधांशु को एक व्यक्ति के रूप में देखने की कोशिश करती दिखाई पड़ी। अनजाने सुधांशु जब मद्य पी रहा था, तब उसने अपनी आत्मीयता का प्रदर्शन किया, लेकिन अंकिता इस टूटे रिश्ते को पुनः जोड़ना नहीं चाहती। दोबारा सोचने के लिए भाई ने कहा, सुधांशु ने कहा और हरीन्द्र का मन भी यह चाहता था, लेकिन अंकिता का जवाब असल में नारी शोषण के खिलाफ अत्युज्वल प्रतिक्रिया है– 'सुधांशु जी औरत बोनसाई का पौधा नहीं, जब भी चाहा, उसकी जड़ें काटकर उसे वापस गमले में रोप लिया, वह बौना बनाए रखने की इस साजिश को अस्वीकार भी तो कर सकती है। **''स्त्री की संवेदना को न पहचाननेवाले सुधांशु को अंकिता ने एक व्यक्ति के रूप में माना अथवा सदा के लिए संबंधों से अलग होने की सूचना दी।''**[4]

वस्तु में तब्दील होती नारी– नीता भी अपने पति से अलग हो गई। वह भी अपने पति पर कामुकता का आरोप लगाती है। जहॉ प्रेम का अभाव है या जहॉ स्त्री की कोमल भावनाओं का तिरस्कार होता है, वहॉ स्त्री निराश होकर उस जिंदगी से विरक्त हो जाती है। नीता अपने को आधुनिक समझकर, मॉडल बनकर विज्ञापन जगत में तितली के समान उड़ रही थी। अंत में सुधीर गुप्ता के प्रेम को उसने छल समझा। वह अधीर बनकर आत्महत्या करती है। एक स्त्री के दारूण पतन के साथ स्त्री के प्रति पुरुष के कठोर अन्याय के शिकार की प्रतीक भी है नीता। जो दिखाई देता है, उसे वह सत्य समझती है। जब नीता को प्रसव के लिए अस्पताल में दाखिल किया गया, तब अंकिता से नीता को सत्योद्घाटन देखिए, 'दैट बास्टर्ड, उसने मुझे छला है, प्रेम–प्रेम कुछ नहीं, काम–संबंधों का भूखा भेड़िया, आई हेट हिम।

नीता जब सुधीर के संग रहने लगी, तब उसके घरवालों तथा अंकिता ने भी उस पर प्रश्न किया था। इसकी वजह यह थी कि सुधीर शादीशुदा है, दो बच्चों का पिता है, लेकिन नीता का दृष्टिकोण एंव सोच उसके अपने थे। उसके अनुसार, 'उसकी पत्नी है तो क्या पत्नी माता–पिता द्वारा सौंपी गई व्यवस्था मात्र है।

वास्तविक अर्थों में अर्चना उसकी पत्नी हो तो वह परस्त्री ढूँढ़ता। नीता सुधीर की जीवन–सहचरी बनकर उसके रिक्त जीवन को फूलों से भरना चाहती थी। उसके अनुसार पत्नी शब्द में दासत्व की बू है। यहॉ वाकई दूसरी औरत या उसे रखैल कहिए, नीता उसमें अपनी तुष्टि मानती थीं। यह उसका स्वातंत्र्य समझती थी। उसके अनुसार– हम प्रेम करते हैं। हमारा प्रेम आवेग नहीं है। न क्षणिक उन्माद! यह परस्पर संवाद है। परिपक्व! मानसिक जुड़ाव। हम वर्जनाहीन होकर जिएंगे! बंधनहीन होकर बंधेंगे, रूढ़िमुक्त हो मानसिक वरण। नीता तथा सुधीर की भाव संवेदनाएँ अन्य परिवार के लोगों की तरह हैं। ''**अंकिता ने उसके प्रेम की परिभाषा पर आपत्ति सूचित की। सुधीर के छलने की ओर संकेत किया। सुधीर अपनी पत्नी से और नीता से, दोनों से अन्याय कर रहा है, मतलब दोनों हाथों में लड्डू बनाए रखने की कामांध चतुरता है। अंकिता ने समझाया कि जिस वर्जनाहीन समाज की परिकल्पना की वकालत नीता कर रही है या उसकी तरह विचारशील होने का दंभ भरती अनेक अन्य आधुनिकता इन थोथे तर्कों की आड़ में पुरुष को वह छूट दे रही हैं कि वह अनुत्तरदायित्वपूर्ण होकर आत्मसुख को किसी भी सीमा तक भोगने के लिए स्वतंत्र है और उसकी इन उच्छृंखलताओं के लिए स्त्री स्वयमेव उसे उपलब्ध है।**''[5]

पहले समाज में आत्मनिर्भर न होने के कारण स्त्री रखैल कहलाकर सामाजिक व्यवस्था में घिनौनी जिंदगी बिता रही थी, लेकिन आज स्त्री आत्मनिर्भर होने के कारण वह नाम नहीं है तो भी स्त्री अब भी पीछे की सामाजिक व्यवस्था का समर्थक बन रही है। पुरुष की भोगेच्छा और उच्छृंखला जीवन के लिए स्त्री ही मदद देती है, लेकिन आधुनिक नारियॉ इसे अपना स्वातंत्र्य समझकर वास्तविक शोषण को समझती नहीं हैं। अंकिता के अनुसार स्त्री–पुरुष समानता का तात्पर्य स्त्री को मर्द बनाना नहीं है, समाज में पुरुष के लिए जो अनैतिक, अमानवीय, दुराचरण और उच्छृंखल है, वह स्त्री के लिए भी है। औरत को जरूर अपने मन को महत्व देना चाहिए।

पुरुष आत्मसम्मान देना नहीं चाहता तो उसे ठेंगे पर रखिए। वैवाहिक व्यवस्था दो व्यक्तियों के साथ आत्मसम्मानपूर्ण साझेदारी है। दूसरी औरत बनकर रहने का मतलब है कि स्त्री दोहरे शोषण से गुजर रही है। 'स्त्री को स्त्रीत्व से मुक्ति नहीं चाहिए, उन रूढ़ियों से मुक्ति चाहिए, जिन्होंने उसे वस्तु बना रखा है, जो स्त्री को भोग की वस्तु मानकर उसे इस्तेमाल करती आई है और कर रही है। यह शुद्ध काम संबंधों की सुविधा है।

अंकिता के उपदेशों को नकारते हुए नीता ने जिस रिश्ते को सत्य माना, वह जल्दी ही टूट गया। वे परस्पर आरोप लगाते हैं। सुधीर के पास दूसरा रास्ता है। वह अपनी पत्नी और बच्चों के पास चला गया। सुधीर की पत्नी ने नीता से जो कहा, वह बिल्कुल सही है, **''तुम सिर्फ उनके लिए एक फिल्म थी, सिर्फ एक फिल्म और जो गहरा लगाव एक संवेदनशील निर्देशक को चरम संवेदना के साथ अपने फिल्म निर्माण के दौरान फिल्म से होता है, वह फिल्म सोचता है, फिल्म खाता है, फिल्म पीता है, फिल्म ओढ़ता है, फिल्म सोता है, फिल्म चलता है और फिल्म ही रति करता है, तुम वही और उतनी ही हो और फिल्में बनाना उनका शौक है।''**[6]

नीता के बाद सुधीर दूसरी फिल्म के लिए जाएगा। उसके जीवन में स्त्री के लिए वही स्थान है, जो फिल्म का, वह क्षणिक है। यहॉ उल्लेखनीय बात है कि दूसरी औरत को भी सामाजिक स्वीकृति नहीं होगी। इसलिए पुरुष जल्दी उसे छोड़ने के लिए तैयार हो जाएगा। वहॉ कानून का बंधन भी नहीं है। ''**यहॉ नीता मानसिक उद्विग्नता से अशांत अपने में कैद–सी हो गई। उसने एक बच्चे को जन्म भी दिया। उसके बारे में भी वह चिंतित है। वह अनाथत्व महसूस करने लगी, लेकिन अंकिता के अनुसार मुक्त मनुष्य कभी भी अनाथ नहीं बनेगा, लेकिन नीता ने जीवन से पलायन करने के लिए आत्महत्या की। आत्मविश्वास से पोर–पोर डूबा व्यक्तित्व था, जटिल से जटिल परिस्थितियों से जूझने को तत्पर थी, सदैव स्फूर्तिपूर्ण मुद्रा में थी, लेकिन वह छुई–मुई होकर खुद अपने नाश के लिए तैयार हो गई।''**[7]

जीवन जीने की अदम्य लालसा थी उसमें। अपने प्रेम का प्रतिफल बच्ची के प्रति भी उसने मोह छोड़ दिया। उपन्यासकार यह सवाल हमारे सामने पेश करती हैं, पुरुष के लिए जीवन का संपूर्ण अर्थ स्त्री मात्र नहीं होती, स्त्री चाहे जितनी आगे बढ़ जाए पद, प्रतिष्ठा, ख्याति अर्जित कर ले, उसका पूरा जीवन एक अदद पुरुष क्यों हो उठता? पुरुष और स्त्री के बीच का यह फर्क क्यों है? शायद स्त्री–पुरुष की प्राप्ति से अपने को धन्य समझकर अपने इष्ट पुरुष के लिए अपना सर्वस्व सौंप देती है। वह इससे परे दूसरा चाहती नहीं है। स्त्री अपना सब–कुछ अपने पुरुष को समझती है। यहॉ नीता भी सुधीर के अलगाव से पूर्णतः शिथिल हो गई। उसने समझ लिया कि उसने जिसे स्त्री–स्वातंत्र्य समझा, वह गलत है। जिस संसार के आडंबर से वह आकृष्ट हो गई, वह झूठा है। अपनी गलती को उसने अपने जीवन के अनुभव से समझ लिया। इसे देश की स्त्री को यहॉ के संस्कार के अनुसार जीना चाहिए।

भारतीयता और भारतीय संस्कार के महत्व पर उपन्यासकार ने बल दिया। नीता ने अपनी आत्महत्या के वक्त अंकिता के नाम पर एक पत्र लिखकर रखा था। वह पत्र भारतीय स्त्री क्या है। वह स्पष्ट करता है। कितने फैशनपरस्त एवं आधुनिक होने पर भी स्त्री, स्त्री ही है, वह एक पुरुष में पूर्णतः डूब जाना चाहती है। नीता ने अपनी बेटी को अंकिता को सौंपते हुए जो पत्र लिखा, वह स्त्री को पहचानने में काफी मदद करता है। वह स्त्री मन के अदम्य मोहों एवं कामनाओं के हमारे सामने खोल देता है। आज महसूस हो रहा है रीढ़ के बिना कोई जिंदा कैसे रह सकता है? सोचती हूँ, इस देश की स्त्री को यहीं का खुला हवा–पानी चाहिए, यहॉ की मिट्टी का पौधा चाहिए। यहीं के मौसम के अनुशासन में जी सकती है।

बाहरी और उधार लिया हवा–पानी उसे पच नहीं सकता। पच जाता तो सुधीर के छोड़ देने पर वह मन अपने लिए कोई अन्य अहलूवालिया या श्रीधर क्यों नहीं तलाश पाया और अंकुर जिस दिन से सुधीर को उस मन ने चाहा, देह भी अपना धर्म भूल गई, उसी को चाहने लगी। यही मानती रही थी कि देह का धर्म और है, जरूरी नहीं कि वह मन के प्रति निष्ठावान रहे। उसकी जरूरत अलग हो

सकती है। अलग लगती भी रही और मैंने उन्हें अलग रूप में जिया भी, लेकिन जिस दिन से यह मन सुधीर से जुड़ा, देह भी उसी के साथ जुड़ गई, वह सुधीर को ही चाहने लगी, किसी के चाहने पर भी नहीं जग पाई, क्यों? मैंने मूल्य तोड़, पति–पत्नी के दासत्व भरे संबंधों से मुक्त कामना लिए शुद्ध रूप से भरी पुरुष संबंधों की गहराई और उदात्तता को जीना चाहा, लेकिन। यहॉ भारतीय संस्कृति में पली–बढ़ी स्त्री की मानसिकता को उपन्यासकार पेश करने के साथ पति–पत्नी संबंधों का असली रूप भी प्रकट करती हैं। यहॉ पत्नी–धर्म और विशेष रूप से भारतीय पत्नी का स्वयं इस उपन्यास में खुलता है। वह उच्छृंखल नहीं है। मन एक को देकर शरीर दूसरों को परोसनेवाली भारतीय मिट्टी की नहीं है। यद्यपि नीता पहले उच्छृंखल थी, तो भी एक पुरुष को मन से वरण करने के बाद उसमें ही सीमित हो गई। वह भटकती नहीं थी, लेकिन इसे पहचानने के लिए सुधीर तैयार नहीं था। सुधीर के ऑखों में जिस प्रकार एक फिल्म है, वह मात्र थी नीता। जब स्त्री वस्तु बनती है, तब उसकी जिंदगी दूसरों के हाथ की कठपुतली बनकर बरबाद हो जाती है, लेकिन अंकिता की सृष्टि उपन्यासकार के मन की स्त्री संबंधी धारणा ने की है। **''प्रत्येक युग की अपनी परिस्थितियॉ, मान्यताएँ और धारणाएं होती हैं, उन्हीं के अनुरूप समाज का सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक ढॉचा निर्मित होता है। युगीन परिस्थितियों को परिचालित करने में वैचारिक चिंतन की अहम भूमिका होती है।''**[8]

अंकिता अपने जीवन के आरंभ से लेकर स्वतंत्र होकर अपनी अस्मिता को बनाए रखती है। परिपक्व मानसिकता उसकी सबसे बड़ी विशेषता है। सुधांशु से तिरस्कृत, प्रताड़ित मन किसी को मामूली सी भी सहानुभूति या सौहार्दपूर्ण व्यवहार से उसे अपना समझने की भूल नहीं कर बैठता है। उसने पुरुष के अहंग्रस्त मन और स्त्री के मोहों एवं छोटे–छोटे स्वप्नों को तहस–नहस करने वाले पुरुष रूप को सुधांशु में पाया। इसलिए उसने सोच–समझकर कदम उठाए। विज्ञापन जगत की चमक उसकी समझ के परे थी, लेकिन अपनी अस्मिता को तिलांजलि देने या अपने शरीर को परोसने के लिए तैयार नहीं हुई। मैथ्यू जैसे लोगों की नीचता को उसने पहचान लिया, उसका सही जवाब भी दिया। स्त्री जहॉ भी हो, वहॉ उसे आकृष्ट

करने के लिए ज्वाला होगी, लेकिन उसी ज्वाला को पहचानना स्त्री धर्म है। स्त्री को अपने शारीरिक सौंदर्य से नहीं, अपनी प्रतिभा और कार्य कुशलता से प्रत्येक क्षेत्र में विजय हासिल करने की जरूरत है। स्त्री के शारीरिक सौंदर्य की प्रशंसा करने वाले अनेक होंगे, लेकिन उसकी बुद्धि और कार्यक्षमता को मानने के लिए कोई नहीं होगा। यहॉ नीता के शारीरिक सौंदर्य से वह अपने क्षेत्र में शुरू से जीतती थी। मैथ्यू की कंपनी में हो या दूसरी कंपनी में। इस नव औपनिवेशिक काल में संबंध, घर एवं परिवार का महत्व नष्ट हो रहा है। कल बहुत सी पूर्व धारणाएँ मिथ्या साबित हुईं, नीता ने उसके साथ कोई कूटनीति नहीं बरती, थोड़ी बहुत बरती भी तो तभी जब उसे यह अनुमान हो गया कि स्थिति अब उसके अनुकूल नहीं रही और जब उसके अनुकूल नहीं रही, तब उसे अपने हित में इस्तेमाल करके उसने कौन सा अनर्थ किया।

औपनिवेशिक मानसिकता संकुचित स्वार्थ व्यापारी मानसिकता है। चित्राजी के अनुसार उस माहौल में ही परिवार भारतीय संस्कृति की आधारशिला है। उस पारिवारिक सुदृढ़ता में संबंधों की आर्द्रता है। घर का माहौल स्नेह संबंधों की आर्द्रता से गुंजायमान है तो वहॉ से जीने का आत्मबल सबको मिल जाएगा। उपन्यास में अंकिता घर के लिए उचित स्थान देनेवाली है। शुरू से लेकर बंबई शहर में वह अपना एक घर बनाने की कोशिश में थी। वह अपने पति सुधांशु के साथ घर बसाना चाहती थी, लेकिन वह असफल हुआ। फिर भी अपने परिवार वालों के साथ तथा मॉ से उसका संबंध गहरा था। पति से अलग होने पर भी उसकी मॉ और उसका संबल बन गया।

निष्कर्ष–

घर संबंधी परिभाषा अंकिता और नीता के बीच की बातचीत के दौरान उभरती है। अंकिता के अनुसार दफ्तर में या कहीं और चाहे जितने कप चाय पी ली जाए, घर पहुॅचने का जो एक राहत भरा अहसास वहॉ की एक कप चाय से होता है, उसे इन विकल्पों से नहीं भरा जा सकता। नीता इसे कोरी भावुकता समझती है। अंकिता इसे नहीं मानती है। नीता के मन में सवाल यह है कि व्यक्ति

के बिना घर कैसे संभव हो जाएगा, केवल चोर–उच्चकों से सुरक्षा एवं भेड़ियों से बचाव के लिए एक आड़ मात्र है घर। अंकिता जानती है सचमुच व्यक्ति के साथ दीवारों का कोई अर्थ होता है, किंतु व्यक्तिहीन होकर भी कभी–कभी उसके अस्तित्व का आभास अपनी निर्जीवता–बोध की परतें निकालकर सहसा सामने प्रकट हो, वह अकेलेपन को आश्रय ही नहीं देता, अपने साथ होने के गहरे बोध से भी संपन्न करता है।

संदर्भ सूची

1– पाठक विनय कुमार एवं ठाकुर डी.एस., आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी और समकालीन विमर्श, पंकज प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2010, पृ.14

2– मुद्गल चित्रा, एक जमीन अपनी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009, पृ.32

3– मुद्गल चित्रा, एक जमीन अपनी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009, पृ.47

4– मुद्गल चित्रा, एक जमीन अपनी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009, पृ.35

5– मुद्गल चित्रा, एक जमीन अपनी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009, पृ.27

6– मुद्गल चित्रा, एक जमीन अपनी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009, पृ.28

7– वनजा के., चित्रा मुद्गल एक मूल्यांकन, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ.28

8– मिश्रा अर्चना, चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य में युग–चिंतन, भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, फैजाबाद, संस्करण 2008, पृ.21